आ गई है दीपावली

अंधकार की कालिमा धीरे-धीरे गहरी होती जा रही थी। चारों ओर फैले तिमिर के आवरण ने प्रकाश को पूर्ण रूप से निगल लिया था। घोर अंधकार का राज्य छाया हुआ था और बीच-बीच में अंधकार रूपी राक्षस की ठठा कर हँसने की आवाज और भी भयंकर प्रतीत हो रही थी। ऐसे असह्य वातावरण में मानव ने अत्यंत घुटन, बेचैनी और छटपटाहट का अनुभव किया। मक्खी भी अंधकार में बैठना पसंद नहीं करती तो भला देवताओं का वंशज मानव इसे कैसे सहन करता? उसने इस अंधकार को कहीं दूर खाई में फेंककर आने का दृढ़ संकल्प किया। आधी रात्रि तक डोलियों और टोकरों में अंधकार को भर-भर कर फेंकने का यह प्रयास चलता रहा, परंतु जहाँ से अंधकार उठाया जाता था वहाँ उसकी जगह और भी गहरा अंधकार हो जाता था और जहाँ उसे फेंका जाता था वहाँ पहले से ही घना अंधकार मौजूद था। शनैः-शनैःअंधकार और भी गहरा होता चला गया। निष्कर्ष कुछ भी न निकला। मानव मन थकान और बेचैनी से तिलमिला उठा। हारकर वह मन ही मन किसी अज्ञात दिव्य शक्ति से सहयोग की कामना करने लगा।

तभी उसे अपने सम्मुख एक दिव्य और अलौकिक आभा से आलोकित विचित्र प्रकाश पुंज दिखाई दिया और उसने उस छोटे से प्रकाश पुंज के दूर तक फैले प्रकाश में एक गुंजायमान स्वर सुना। हे वत्स, यदि इस दिव्य ज्योति से तुम असंख्य दीपक जलाते जाओ तो क्षणों में ही इस घिनौने अंधकार का अस्तित्व समाप्त हो जाएगा।

वैसे ही किया गया और धीरे-धीरे एक, अनेक और फिर अनगिनत दीप मालाएँ उस दिव्य आभा से चमकने लगी। सभी प्राणियों में नवीन उत्साह और उमंग की लहर छा गई। चारों दिशाओं में दूर तक कहीं भी अंधकार का नामोनिशान न था। असत्य पर सत्य ने, मृत्यु पर अमरत्व ने तथा अंधकार पर प्रकाश ने विजय प्राप्त कर ली थी। चारों ओर बिखरे दिव्य और अलौकिक आभा से युक्त इस प्रकाश में अब जगमगाते हुए स्वर्ण महल दिखाई दे रहे थे। घी और दूध की नदियाँ बह रही थी। शेर और गाय

एक घाट पर पानी पी रहे थे। ईष्या, द्वेष और हिंसक प्रवृति का नामोनिशान न था। पतित और विकारी मनुष्यों के बदले अति दिव्य गुण सम्पन्न, सम्पूण निविकारी सतोगणी वृति वाले देवगण दिखाई दे रहे थे।

सुख-समृद्धि तथा श्री एवं शक्ति की अधिष्ठात्री सूय सी तेजोमयी कमल पुष्प पर विराजमान देवी लक्ष्मी की छटा चारों ओर बिखरी पड़ी थी। सम्पूण विश्व बदल चुका था। मानव अब देव बन चुका था। दरिद्रता और कंगाली की प्रतीक टूटी-फूटी झोपड़ियों की जगह हीरे-माणिक्यों से जड़े स्वणिम महलों ने ले ली थी। दुख और अशांति, भ्रष्टाचार तथा अत्याचार से पीड़ित कलियुग अब सुख-शांति तथा धन-धान्य से सम्पन्न सतयुग म बदल चुका था।

नव प्रभात की सुनहरी किरण फूट रही थी। बस तभी से ही इस आलोक एवं दीपावली का जन्म हुआ। प्रतिवष इसकी दिव्य स्मृति म खुशियाँ मनाई जाती रहीं। लेकिन कालांतर म इसके साथ विभिन्न किवंदंतियाँ तथा अनेक ऐतिहासिक घटनाएँ जुड़ती गईं। सागर मंथन से चौदह रत्नों सहित लक्ष्मी का प्रकट होना, महाकाली का शिव म समावेश, श्रीकृष्ण द्वारा नरकासुर के अत्याचारों का अंत, श्री राम का अयोध्या म अपूव स्वागत, वधमान महावीर, स्वामी रामतीथ आदि देहांतोत्सव तथा स्वग मंदिर की नींव रखना आदि अनेक घटनाएँ समय-समय पर इसके साथ सम्बन्धित होती गई। मानने का ढंग और मनाने का कारण चाहे कुछ भी हो, परंतु भारत म सभी प्रकार के सम्प्रदायों के द्वारा यह त्योहार बड़ी धूम-धाम से मनाया जाता रहा।

समय के साथ-साथ धीरे-धीरे इन घटनाओं का महत्व बढ़ता गया और दीपावली का वास्तविक रहस्य तथा साथ ही साथ सत्य ज्ञान का अद्वितीय प्रकाश भी लोप होता गया। इसी कारण फिर से अज्ञान के अंधकार का साम्राज्य छाने लगा। मनुष्य दानवता की ओर बढ़ने लगा। देश से सुख और समृद्धि की देवी रूष्ट हो गई। पहले जैसी ही घुटन और बेचैनी बढ़ने लगी। दिव्य और अलौकिक ज्योति के पावन पव दीपावली का

स्मृतियाँ अब धूमिल पड़ने लगी और अज्ञान के अंधकार में मनुष्य स्थूल अंधकार को मिटाने का उपाय ढूँढ़ने लगा।

मनुष्य में अंधकार से प्रकाश की ओर जाने की प्रवृत्ति सदा से ही रही है। वह अंधकार से प्रकाश की ओर बढ़ना चाहता है। आलोक के मार्ग पर बहुत आगे बढ़ चुकने के बाद भी वह उसकी पराकाष्ठा तक पहुँचना चाहता है क्योंकि अंधकार में तड़पन और बेचैनी है। अंधकार अवनति का सूचक भी है। प्रकाश में ही प्रसन्नता और उल्लास है तथा यह उन्नति का सूचक है। प्रकाश में ही मनुष्य वस्तुओं का सही मूल्यांकन कर सकता है। प्रकाश ही मनुष्य का सही मार्ग दर्शन करता है।

दीपावली का आध्यात्मिक रहस्य

कार्तिक की अमावस्या को भारतवर्ष के घर-घर में प्रकाश दीप जगमगा उठते हैं और बच्चे,बूढ़े, युवक सभी आनंद से भर जाते हैं। सभी अपने-अपने घरों की तथा कपड़ों की सफाई करते हैं। व्यापारी वर्ग इस शुभ दिवस पर पुराने खाते को बंद कर नया खाता खोलते हैं। मान्यता है कि धन की देवी श्री लक्ष्मी इस रात्रि में भ्रमण करती है और अलौकिक गृहों को धन-धान्य से परिपूर्ण कर देती है। अपने भाग्य की परीक्षा लेने के लिए के लिए लोग जुआ भी खेलते हैं। रात्रि के अंतिम प्रहर में माताएँ सूप की कर्कश ध्वनि से दरिद्रता को निकालती हैं तथा गाँव के बाहर सामूहिक रूप से उसे जला देती हैं।

क्या आपने कभी विचार किया है कि श्री लक्ष्मी के स्वागत के लिए प्रति वर्ष दीपमाला जगाकर भी भारतवर्ष क्यों दरिद्र हो गया है? जगमगाते दीपों को देखकर भी श्री लक्ष्मी क्यों हमसे रूठ गई है? जगते हुए दीप उनको आकृष्ट क्यों नहीं कर पाते? वे कौन सा दीप जलाना चाहती हैं? वस्तुतः आत्मा ही सच्चा दीपक है। विकारों के वशीभूत हो जाने के कारण आत्मा का प्रकाश आज मलिन हो गया है। मनुष्य का अंतरतम तमसाच्छन्न है। ऐसे विकारी मनुष्यों के बीच श्री लक्ष्मी का शुभागमन कैसे हो सकता

है? लेकिन कितनी विडंबना है कि आत्म-दीप प्रज्ज्वलित कर कमल पुष्प सदृश अनासक्त बन कमलासीन श्री लक्ष्मी का आह्वान करने की जगह मिट्टी के दीप जला कर बच्चों के खेल खेलते रहते हैं। मन मंदिर की सफाई करने की जगह बाह्य सफाई से ही हम खुश हो जाते हैं। तभी तो श्री लक्ष्मी हमसे रूठ गई हैं। कमल सदृश बनकर ही हम कमला को प्राप्त कर सकते हैं।

अमावस्या की काली रात्रि की तरह आज चतुर्दिक घोर अज्ञान अंधकार छाया हुआ है। कहीं कुछ सूझ नहीं रहा है। मतमतांतर के जाल में मानव मात्र भ्रमित है। सभी आत्माओं की ज्योति बुझ चुकी है। ऐसे समय में सदा जागती ज्योति निराकार परमपिता परमात्मा शिव सर्वात्माओं की ज्योति जगाने के लिए कल्प पूर्व की भाँति इस धराधाम पर अवतरित हो चुके हैं और प्रायः लोप गीता ज्ञान तथा सहज राजयोग की शिक्षा दे रहे हैं। निर्विकारी बन उस सदा जागती ज्योति से अपनी आत्मा का दीपक जगाकर ही हम सच्ची दीपावली मना सकते हैं। तब ही इस देवभूमि भारतवर्ष पर श्री लक्ष्मी-नारायण के दैवी स्वराज्य की पुनः स्थापना होगी, जहाँ रत्न जड़ित स्वर्ण महल होंगे और घी-दूध की नदियाँ बहेंगी। इस युगांतकारी घटना की पावन स्मृति में ही हम दीपावली का त्योहार मनाते हैं। इस अवसर पर सदा जागती ज्योति निराकार परमात्मा शिव का प्रतीक एक बड़ा दीप जलाया जाता है और उसी से अन्य दीपकों की ज्योति जलाई जाती है। अन्य किसी देवता के मंदिर में सदा दीप नहीं जलता है लेकिन आज भी भगवान विश्वनाथ के मंदिर में अनवरत दीप जलता रहता है क्योंकि एकमात्र निराकार परमात्मा शिव ही सदा जागती ज्योति है।

ब्रह्माकुमारी निर्मला